मगध

श्रीकान्त वर्मा

राजकमल प्रकाशन

नयी दिल्ली पटना

निर्मल वर्मा के लिए

क्रम

नान्दीपाठ

गुनगाहक ! गुनसागर ! गुननिधान !
बहुत वर्षों बाद
मैं आपके दरवाज़े आया हूँ—

सुनिये यजमान,
जन्म-जन्मान्तरों की कथाएँ
नगरों-नागरिकों की व्यथाएँ
लाया हूँ—

पहचाना मुझे ?
वेताल—
मुझे
मेरे कृत्यों ने
काल की रुग्ण एक डाल
पर लटका दिया
था

गुनगाहक ! गुनसागर ! गुननिधान !
आपकी दया से
मैंने नर-योनि
फिर धारण की

अब एक और मुझे वर दें
अगर मैं आपको स्वर न दे सकूं
आप
मुझे स्वर दें

1984

मगध

सुनो भई घुड़सवार, मगध किधर है
मगध से
आया हूँ
मगध
मुझे जाना है

किधर मुड़ूँ
उत्तर के दक्षिण
या पूर्व के पश्चिम
में ?

लो, वह दिखायी पड़ा मगध,
लो, वह अदृश्य—

कल ही तो मगध मैंने
छोड़ा था
कल ही तो कहा था
मगधवासियों ने
मगध मत छोड़ो
मैंने दिया था वचन—
सूर्योदय के पहले
लौट आऊँगा

न मगध है, न मगध

तुम भी तो मगध को ढूँढ रहे हो
बन्धुओ,
यह वह मगध नही
तुमने जिसे पढा है
किताबो मे,
यह वह मगध है
जिसे तुम
मेरी तरह गँवा
चुके हो

1979

मगध के लोग

मगध में लोग
मृतकों की हड्डियां चुन रहे हैं

कौन-सी अशोक की हैं ?
और चन्द्रगुप्त की ?
नही, नही,
ये बिम्बिसार की नही हो सकती
अजातशत्रु की हैं,

कहते हैं मगध के लोग
और आंसू
बहाते हैं

स्वाभाविक है

जिसने किसी को जीवित देखा हो
वही उसे
मृत देखता है
जिसने जीवित नही देखा
मृत क्या देखेगा ?

कल की बात है—
मगधवासियो ने

अशोक को देखा था
कलिंग को जाते
कलिंग से आते
चन्द्रगुप्त को तक्षशिला की ओर घोड़ा दौड़ाते
आँसू बहाते
बिम्बिसार को
अजातशत्रु को
भुजा थपथपाते

मगध के लोगों ने
देखा था
और वे
भूल नहीं पाये हैं
कि उन्होंने उन्हें
देखा था

जो अब
ढूँढने पर भी
दिखायी नहीं पड़ते

1984

काशी में शव

तुमने देखी है काशी ?
जहाँ, जिस रास्ते
जाता है शव—
उसी रास्ते
आता है शव !

शवों का क्या !
शव आएँगे,
शव जाएँगे—

पूछो तो, किसका है यह शव ?
रोहिताश्व का ?
नही, नही,
हर शव रोहिताश्व नही हो सकता

जो होगा
दूर से पहचाना जायेगा
दूर से नही, तो
पास से—
और अगर पास से भी नही,
तो वह
रोहिताश्व नही हो सकता

और अगर हो भी तो
क्या फर्क़ पड़ेगा ?

मित्रो,
तुमने तो देखी है काशी,
जहाँ, जिस रास्ते
जाता है शव
उसी रास्ते
आता है शव !

तुमने सिर्फ यही तो किया—
रास्ता दिया
और पूछा—
किसका है यह शव ?

जिस किसी का था,
और किसका नहीं था,
कोई फर्क पड़ा ?

1984

काशी का न्याय

सभा बरख़ास्त हो चुकी
सभासद चलें

जो होना था सो हुआ
अब हम, मुंह क्यों लटकाए हुए हैं ?
क्या कशमकश है ?
किससे डर रहे हैं ?

फ़ैसला हमने नहीं लिया—
सिर हिलाने का मतलब फ़ैसला लेना नहीं होता
हमने तो सोच-विचार तक नहीं किया

बहसियों ने बहस की
हमने क्या किया ?

हमारा क्या दोष ?
न हम सभा बुलाते हैं
न फ़ैसला सुनाते हैं
वर्ष में एक बार
काशी आते हैं—
सिर्फ़ यह कहने के लिए
कि सभा बुलाने की भी आवश्यकता नहीं
हर व्यक्ति का फ़ैसला
जन्म के पहले हो चुका है

1984

कोसाम्बी

पूछ रही है, वासवदत्ता
कोसाम्बी के
पहले
क्या था ?

वासवदत्ता !

कोसाम्बी के पहले
केवल
कोसाम्बी थी,

कोसाम्बी के बाद
केवल
कोसाम्बी है

कोसाम्बी के बदले
केवल
कोसाम्बी
मिल सकती है

कोसाम्बी का पता पूछती
वासवदत्ता
कोसाम्बी तक
पहुँच गयी है

1979

हस्तिनापुर

ज़रा सोचो
उस व्यक्ति के बारे में,
जो, हस्तिनापुर आता है
और कहता है
नहीं, नही, यह हस्तिनापुर नहीं हो सकता।

ज़रा सोचो
उस व्यक्ति के बारे में,
जो, अकेला पड गया है—
कभी भी लड़ा गया हो महाभारत, क्या फर्क पड़ता है ?

सम्भव हो,
तो सोचो
हस्तिनापुर के बारे में,
जिसके लिए
थोड़े-थोड़े अन्तराल मे,
लड़ा जा रहा है, महाभारत
और किसी को फर्क नही पडता
उस व्यक्ति को छोड
जो आता है हस्तिनापुर
और कहता है,
नहीं, नही, यह हस्तिनापुर नहीं हो सकता।

1984

हस्तिनापुर का रिवाज

मैं फिर कहता हूँ
धर्म नही रहेगा, तो कुछ नहीं रहेगा—
मगर मेरी
कोई नही सुनता !
हस्तिनापुर में सुनने का रिवाज नही—

जो सुनते हैं
बहरे हैं या
अनसुनी करने के लिए
नियुक्त किये गये हैं

मैं फिर कहता हूँ
धर्म नहीं रहेगा, तो कुछ नही रहेगा—
मगर मेरी
कोई नही सुनता

तब सुनो या मत सुनो
हस्तिनापुर के निवासियो ! होशियार !
हस्तिनापुर मे
तुम्हारा एक शत्रु पल रहा है, विचार—
और याद रखो
आजकल महामारी की तरह फैल जाता है,
विचार।

1984

कपिलवस्तु

कपिलवस्तु में दिन में आँखें कड़ुआती हैं
रातें
रंगमहल में डूबी रह जाती हैं

वृद्ध वृद्ध होने के कारण देशनिकाला पाता
सरहद पर
ठिठक
कपिलवस्तु को देख-देखकर
ललचाता है

कभी-कभी वधुएँ
सपने देखती
चिहुंक जाती हैं

कपिलवस्तु में वृद्ध नहीं हैं
सिर्फ
वृद्ध होने का भय है
कपिलवस्तु में कोई वृद्ध न हो
युवा होने का
इतना ही आशय है

कपिलवस्तु को हुए बहुत दिन
नहीं
हुए हैं

1979

नालन्दा

मैं तो तक्षशिला जा रहा हूँ,
तुम
कहाँ जा रहे हो ?

नालन्दा।

नहीं,
यह रास्ता
नालन्दा नहीं जाता,
कभी
जाता था
नालन्दा,
अब नहीं।

नालन्दा ने
अपना
रास्ता बदल दिया
अब इस
रास्ते से
नालन्दा नहीं
तक्षशिला
पहुँचोगे तुम।
चलना है, तक्षशिला ?

नालन्दा जाने वाले मित्रो,
प्राय:
यही होता है,
बताये गये
रास्ते
वहाँ नहीं जाते
जहाँ
हम पहुँचना चाहते हैं—
जैसे
नालन्दा ।

1984

मिथिला क्यों नहीं ?

राजन चिन्तित न हों—
चिन्ता से काया कृश
होती है,
आत्मा निस्तेज,
स्वर क्षीण !
चिन्ता न करें—

यह भी कोई बात हुई
कि समग्र मिथिला में
एक भी कवि नही
कि समूचे गणराज्य मे
कोई मूर्त्तिकार नही
कि सम्पूर्ण है मिथिला
सिर्फ गायक महां

राजन !
गायको के
होने न होने से
फर्क नही पड़ता—

फर्क पड़ता है सम्पत्ति से,
सेना से, मन्त्रिपरिषद् से !
देखना पड़ता है,
प्रजा सुखी है या नही ?

हैं तो, अवन्ती में
गायक, मूर्तिकार, कवि
क्या कर रहे हैं ?

राजन ! कहते हैं,
अवन्ती रच रहे हैं—
यह कहकर
मृत्यु से बच रहे हैं
कि प्रक्रिया समाप्त नही होती
अवन्ती है, अवन्ती रहेगी !

राजन ! बात मेरी समझ में
नही आयी—
मिथिला क्यो नही थी ?
मिथिला क्यों नही है ?

1984

मथुरा का विलाप

सुन रहे हो मथुरा का विलाप ?

यही होता है—

मथुरा के न रहने पर
मथुरा विलापती है
मथुरा ! मथुरा !

मथुरा सिर्फ़ एक उदाहरण है—
अवन्ती को लो।
ग़ौर से सुनो—

सुना तुमने ?
रह-रहकर टीसता है
अवन्ती ! अवन्ती !

मैंने कहा न—
मथुरा के न रहने पर मथुरा
अवन्ती के न रहने पर अवन्ती
विलापते हैं लोग !

सम्भव है लोगों को

रोने की आदत पड़ गयी हो
नगरों के स्मृतिशेष होने पर

मगर—
मथुरा और अवन्ती
स्मृतियाँ नहीं हैं

और अगर हों भी,
क्या कोई मानेगा
मथुरा और अवन्ती
केवल स्मृतियाँ हैं।

1984

वैशाली-1

वैशाली के लोगो की जबान पर
सिर्फ एक नाम है—
आम्रपाली !

सुखी है आम्रपाली कि हरेक
उसे जानता है
दुखी है आम्रपाली कि कोई
उसे नही जानता

जो जानते हैं
आम्रपाली, आम्रपाली दोहराने
वैशाली आते हैं
शेष
वैशाली से कतराते हैं

वैशाली के निवासियो ! आम्रपाली
सिर्फ एक प्रसंग है—
जो दूसरों को जानते हैं
आम्रपाली, आम्रपाली रटते हुए
वैशाली आएँगे

जिन्हें दूसरों को जानने की इच्छा नही—
आम्रपाली की आड़ मे
वैशाली से आँख बचाकर
निकल जाएँगे

1984

वैशाली-2

हम होंगे, वैशाली होगी
हम न हुए ?
वैशाली होगी।

नगर नहीं वैशाली
स्मृति है
उनकी,
जो हमसे पहले आये थे—

कहते थे जो
हम होंगे, वैशाली होगी।
हम न हुए ?
वैशाली होगी।

1934

कोसल गणराज्य

कोसल मेरी कल्पना मे एक गणराज्य है
कोसल मे प्रजा सुखी नही
क्योंकि कोसल सिर्फ कल्पना मे गणराज्य है।

नागरिक-
दिनभर जुआ खेलते हैं
जो जुआ नही खेलते
ऊँघते हैं

नागरिक दिनभर किस्से गढ़ते हैं
जो किस्से नही गढते
ऊँघते हैं

नागरिक
दिनभर खीझते हैं
जो खीझते नही
ऊँघते हैं

नागरिक
कोसल के अतीत पर
पुलकित होते हैं
जो पुलकित नही होते
ऊँघते हैं

कोसल मेरी कल्पना में गणराज्य है

1934

कोसल में विचारों की कमी है

महाराज बधाई हो! महाराज की जय हो!
युद्ध नहीं हुआ—
लौट गये शत्रु।

वैसे हमारी तैयारी पूरी थी!
चार अक्षौहिणी थीं सेनाएँ,
दस सहस्र अश्व,
लगभग इतने ही हाथी।

कोई कसर न थी!

युद्ध होता भी तो
नतीजा यही होता।

न उनके पास अस्त्र थे,
न अश्व,
न हाथी,
युद्ध हो भी कैसे सकता था?
निहत्थे थे वे।

उनमें से हरेक अकेला था
और हरेक यह कहता था
प्रत्येक अकेला होता है!

जो भी हो,
जय यह आपकी है !
बधाई हो !
राजसूय पूरा हुआ,
आप चक्रवर्ती हुए—

वे सिर्फ़ कुछ प्रश्न छोड़ गये हैं
जैसे कि यह—

कोसल अधिक दिन नहीं टिक सकता,
कोसल में विचारों की कमी है !

1984

कोसल की शैली

बाहर तो निकलिए, महाराज, बाहर
आपकी कीर्ति
चन्द्रिका की तरह
खिली हुई है
सभी सुखी हैं
कोई नहीं कहता
मुझे कुछ कहना है

कुछ हुआ है
कोई
कुछ भी नहीं कहता
सहमा रहता है
कहने के नाम पर
इतना कहता है—
मैं सुखी हूँ

महाराज, बिना कहे कोई
किस तरह
सुखी रह सकता है
सोचा है आपने ?

वैसे तो कीर्ति महाराज की
चन्द्रिका की तरह खिली हुई है

कहने को
हो भी क्या सकता है ?

इतना अवश्य कहूँगा
जो सोचता है
बकता है
उसका बकना
शैली बन जाता है
दुख है
कोसल की अब तक
अब तक
शैली नहीं बन पायी

जो भी हो,
आप तो बाहर निकलिए
भीड़
समवेत कह रही है—
सुखी हैं
हम !

महाराज,
जितना वे कहते हैं
आप भी
उतना ही कहिए—
'प्रजाजन !
सुखी रहिए'

1984

श्रावस्ती

चले गये जो श्रावस्ती को छोड़
वापस आएँ—

अब भी भिक्षुक आते हैं
दोहराते हैं
दुःख से डरकर
चले गये जो
दुःख पायेंगे

जो आता है
दुःख पाता है
जो आता है
दुःख पाता है

कोसल में उतना ही दुःख
जितना
श्रावस्ती में है

श्रावस्ती को छोड़ कोसल में बसने वाले
वापस आयें—
बोलना चाह रही श्रावस्ती
बोल नहीं पाती है

1979

लिच्छवि

लिच्छवि चले गये लिच्छवि फिर आएँगे

महलों में रौनक होगी
अन्तःपुर में
दोबारा कंगन खनकेंगे

हाट सजेंगे
बोली होगी
भिक्षा होगी
भिक्षुक होंगे
इच्छा होगी
इच्छुक होंगे

तब विधवाएँ क्यों उदास हैं ?
वैशाली में सन्नाटा क्यों ?

सच तो यह है लिच्छवि कभी नहीं आएँगे

आए भी तो
दोहराएँगे
हम लिच्छवि थे, हम लिच्छवि हैं

कहते हुए
गुजर जाएँगे

लिच्छवि कभी-कभी होते हैं
इसीलिए लिच्छवि होते हैं

1979

वसन्तसेना

सीढ़ियाँ चढ़ रही है
वसन्तसेना

अभी तुम न समझोगी
वसन्तसेना
अभी तुम युवा हो

सीढ़ियाँ समाप्त नहीं
होती
उन्नति की हो
अथवा
अवनति की

आगमन की हों
या
प्रस्थान की
अथवा
अवसान की
अथवा
अभिमान की

अभी तुम न
समझोगी

वसन्तसेना

न सीढ़ियाँ
चढ़ना
आसान है
न
सीढ़ियाँ
उतरना
जिन सीढ़ियों पर
चढ़ते हैं, हम,
उन्हीं सीढ़ियों से
उतरते हैं, हम

निर्लिप्त हैं सीढ़ियाँ,

कौन चढ़ रहा है
कौन उतर रहा है
चढ़ता उतर रहा
या
उतरता चढ़ रहा है
कितनी चढ़ चुके
कितनी उतरना है

सीढ़ियाँ न गिनती हैं
न सुनती हैं

वसन्तसेना।

1984

अम्बपाली

सोयी पड़ी है, वैशाली
जाग रही है
सिर्फ,
अम्बपाली

अँधेरा है
किसी और दुनिया में
क्रमश:
होता हुआ
सवेरा है

नक्षत्र झरते हैं

वैशाली में लोग
पैदा होते हैं
मरते हैं

सोयी है वैशाली
या
मर गयी है
अम्बपाली
सपने में
डर गयी है

डरो मत अम्बपाली !

1979

वसन्तसेना

न सीढ़ियाँ
चढ़ना
आसान है
न
सीढ़ियाँ
उतरना
जिन सीढ़ियों पर
चढ़ते हैं, हम,
उन्हीं सीढ़ियों से
उतरते हैं, हम

निर्लिप्त हैं सीढ़ियाँ,

कौन चढ़ रहा है
कौन उतर रहा है
चढ़ता उतर रहा
या
उतरता चढ़ रहा है
कितनी चढ़ चुके
कितनी उतरना है

सीढ़ियाँ न गिनती हैं
न सुनती हैं

वसन्तसेना।

1984

अम्बपाली

सोयी पड़ी है, वैशाली
जाग रही है
सिर्फ़,
अम्बपाली

अंधेरा है
किसी और दुनिया में
क्रमशः
होता हुआ
सवेरा है

नक्षत्र झरते हैं

वैशाली में लोग
पैदा होते हैं
मरते हैं

सोयी है वैशाली
या
मर गयी है
अम्बपाली
सपने में
डर गयी है

डरो मत अम्बपाली !

1979

अश्वारोही

अश्वारोही
जो कलिंग को जाता
क्या वह कलिंग से वैसा का वैसा आता है ?

क्या कहते हैं, लोग—
विजयी
या हत्यारा ?
क्या स्वागत
करती हैं
वधुएँ
या
फिरता है मारा-मारा ?

क्या होता है ?

अश्वारोही
यह रास्ता किधर जाता है ?

1979

सदमा

पूर्णिमा थी।
चन्द्रमा था।
दर्पण था।

दर्पण पर
हूबहू
चन्द्रमा-सा था
चन्द्रमा का
अक्स।

देर तक
टिकने के बाद
खिसकता हुआ
चन्द्रमा
चौखट के
बाहर
जा चुका
था।

मैंने कहा,
कितना
सन्नाटा है!

तभी
वह

कोसल से होते हुए मगध
मगध से होते हुए कोसल।

सबसे अहम है यह सवाल
कहाँ जा रहे हो ?

कोसल और मगध में
किसे
ढूँढ़ रहे हो ?

और यह कि
कोसल
पहले आएगा
या मगध ?
सच तो यह है कि
कोई नहीं जानता
वह बार-बार मगध से कोसल
कोसल से मगध क्यों जाता है ?

क्यों दृश्यों को दोहराता है ?

क्यों
मगध से गुज़रते हुए
कोसल के पक्ष में,
कोसल से गुज़रते
मगध के विपक्ष में
नारे लगाता है ?

क्यों,
कोसल के टूटे हुए दुर्गों पर
मगध के
फटे हुए झण्डे
फहराता है ?

जब कहीं से कोई
जवाब नहीं मिलता
तब वह भी
उन्हीं में
शामिल हो जाता है
जो आने-जाते को पकड़ते
और पूछते हैं—

कोसल से होते हुए
मगध जा रहे हो
या
मगध से होते हुए
कोसल ?

1984

मित्रों के सवाल

मित्रो,
यह कहना कोई अर्थ नहीं रखता
कि मैं वापस आ रहा हूँ।

सवाल यह है कि तुम कहाँ जा रहे हो ?

मित्रो,
यह कहने का कोई मतलब नहीं
कि मैं समय के साथ चल रहा हूँ।

सवाल यह है कि समय तुम्हें बदल रहा है
या तुम
समय को बदल रहे हो ?

मित्रो,
यह कहना कोई अर्थ नहीं रखता,
कि मैं घर आ पहुँचा।

सवाल यह है
इसके बाद कहाँ जाओगे ?

1934

छाया

बरसों बाद पता चला
जो
साथ थी,
छाया नहीं थी

मैंने रौंदा
कराही
बुलाया
शरमायी
डपटा
पिण्डलियों से
लिपट गयी
कहा
पीछा छोड़ो
ठिठकी

मैंने बढ़कर जगह ली
भरी सभा में
पास
बैठ
गयी

सभा
उठ चुकी
मण्डलियाँ
कूच कर चुकी हैं
अब भी जो साथ है
छाया नहीं हो सकती

1979

हवन

चाहता तो बच सकता था
मगर कैसे बच सकता था
जो बचेगा
कैसे रचेगा

पहले मैं झुलसा
फिर धधका
चिटखने लगा

कराह सकता था
मगर कैसे कराह सकता था
जो कराहेगा
कैसे निबाहेगा

न यह शहादत थी
न यह उत्सर्ग था
न यह आत्मपीड़न था
न यह सज़ा थी

तब
क्या था यह

किसी के मत्थे मढ़ सकता था
मगर कैसे मढ़ सकता था
जो मढ़ेगा कैसे गढ़ेगा

1979

बुद्धकालीन गणिका का स्वप्न भंग

हाथ फेरते ही ठनकते हैं,
स्तन

नाभि से उठती है, सुगन्ध

जंघा पर
होते हैं सवार
केवल बलिष्ठ
उतारते हैं
नदी में अश्व

ढूंढने आते हैं सुख अथाह
सेनापति,
युवराज।

मूर्छित होती हैं, वामाएँ !

मालती,
कल यह नहीं होगा
पीब में
भरे होंगे
स्तन,

जंघाएँ
स्मारकों की तरह
टूटी पड़ी होंगी

सिर्फ आहट
सुन सकोगी—
कौन ?
सेनापति ?
अथवा युवराज ?

सूख चुकी होगी
सुख की नदी

ठट्ठा करेंगे वे
कल तक जो उतारते थे
अश्व ?
तुम भी हँसोगी।

शव को नदी से निकाल
छोड़ जाते हैं लोग
घाट पर
और कहते हैं—
यह रहा काम

मालती को किसी ने नहीं देखा।

फेरते ही हाथ
टपकते थे,
स्तन।

जंघा पर बलिष्ट
होते थे
सवार।

ढूंढने आते थे
अथाह सुख
युवराज।

मूर्छित होती थी
वामाएँ।

क्या विडम्बना है
मालती,
कल भी तुम
मालती।

1984

जंघाएं
स्मारकों की तरह
टूटी पड़ी होंगी

सिर्फ आहट
सुन सकोगी—
कौन ?
सेनापति ?
अथवा युवराज ?

सूख चुकी होगी
सुख की नदी

ठट्ठा करेंगे वे
कल तक जो उतारते थे
अश्व ?
तुम भी हँसोगी।

शव को नदी से निकाल
छोड़ जाते हैं लोग
घाट पर
और कहते हैं—
यह रहा काम

मालती को किसी ने नहीं देखा।

फेरते ही हाथ
टपकते थे,
स्तन।

अश्व पर बलिष्ठ
होते थे
सवार।

ढूंढ़ने आते थे
अथाह सुख
युवराज।

मूर्छित होती थी
वामाएँ।

क्या विडम्बना है
मालती,
कल भी तुम
मालती।

1984

कृपा है, महाकाल की

आधे रोते हैं, आधे हंसते हैं
दोनों अवन्ती में बसते हैं

कृपा है महाकाल की

आधे मानते हैं, आधा
होना उतना ही
सार्थक है, जितना पूरा होना,

आधों का दावा है, उतना ही
निरर्थक है पूरा
होना, जितना आधा होना

आधे निरुत्तर हैं, आधे बहसते हैं
दोनों अवन्ती में बसते हैं

कृपा है महाकाल की

आधे कहते हैं अवन्ती
उसी तरह आधी है
जिस तरह काशी,

आधे का कहना है
दोनों में रहते हैं
केवल प्रवासी

दोनों तर्कजाल में फँसते हैं
दोनों अवन्ती में बसते हैं

हँसते हैं
काशी के पण्डित अवन्ती के ज्ञान पर
अवन्ती के लोग काशी के अनुमान पर

कृपा है, महाकाल की

1984

जड़

चुप क्यों हो, मित्रो ?

क्या हुआ, मगध में ?

महाराज नहीं रहे ?
अथवा महारानी ने पुनः कन्याजन्म दिया ?

क्या फिर हुई, युद्ध की घोषणा ?
क्या फिर निषेधाज्ञा जारी हुई ?

क्या हुआ ?
चुप क्यों हो ?

क्या काम नहीं आया, जहरमोहरा ?
क्या मगध में कोई नहीं रहा ?

कभी-कभी,
मगध को न जाने क्या हो जाता है
सबकुछ सामान्य होने के बावजूद
न कोई बोलता है
न मुँह खोलता है

सिर्फ शकटार
जड़ को छू
पेड़ की कल्पना करता है
सोचकर सिहरता है

मित्रो,
जो सोचेगा
सिहरेगा

1984

जड़

चुप क्यों हो, मित्रो ?

क्या हुआ, मगध में ?

महाराज नही रहे ?
अथवा महारानी ने पुनः कन्याजन्म दिया ?

क्या फिर हुई, युद्ध की घोषणा ?
क्या फिर निषेधाज्ञा जारी हुई ?

क्या हुआ ?
चुप क्यो हो ?

क्या काम नही आया, जहरमोहरा ?
क्या मगध मे कोई नहीं रहा ?

कभी-कभी,
मगध को न जाने क्या हो जाता है
सबकुछ सामान्य होने के बावजूद
न कोई बोलता है
न मुंह खोलता है

सिर्फ शकटार
जड़ को छू
पेड़ की कल्पना करता है
सोचकर सिहरता है

मित्रो,
जो सोचेगा
सिहरेगा

1984

जो युवा था

लौटकर सब आएँगे
सिर्फ वह नहीं
जो युवा था—
युवावस्था लौटकर नहीं आती।

अगर आया भी तो
वही नहीं होगा।

पके बाल, झुर्रियाँ,
जरा,
थकान
वह बूढ़ा हो चुका होगा।

रास्ते में
आदमी का बूढ़ा हो जाना
स्वाभाविक है—
रास्ता सुगम हो या दुर्गम

कोई क्यों चाहेगा
बूढ़ा कहलाना ?

कोई क्यों अपने
पके बाल
गिनेगा ?

कोई क्यों
चेहरे की सलें देख
चाहेगा चौंकना ?

कोई क्यों चाहेगा
कोई उससे कहे
आदमी कितनी जल्दी बूढ़ा हो जाता है—
तुम्हीं को लो !

कोई क्यों चाहेगा
कि वह
जरा, मरण और थकान की मिसाल बने।

लौटकर सब आएँगे
सिर्फ वह नहीं
जो युवा था।

1984

मणिकर्णिका का डोम

डोम मणिकर्णिका से अक्सर कहता है,
दु:खी मत होओ
मणिकर्णिका,
दुःख तुम्हें शोभा नही देता,
ऐसे भी श्मशान हैं
जहाँ एक भी शव नही आता
आता भी है,
तो गंगा मे
नहुलाया नहीं जाता

डोम इसके सिवा कह भी
क्या सकता है,
एक अकेला
डोम ही तो है
मणिकर्णिका मे अकेले
रह सकता है

दुःखी मत होओ, मणिकर्णिका,
दुःख मणिकर्णिका के
विधान मे नही
दुःख उनके माथे है
जो पहुँचाने आते हैं

दुःख उनके माथे था
जिसे वे छोड़ चले जाते हैं

भाग्यशाली हैं, वे
जो लदकर या लादकर
काशी आते हैं
दुःख
मणिकर्णिका को सौंप जाते हैं

दुःखी मत होओ
मणिकर्णिका,

दुःख हमें शोभा नहीं देता

ऐसे भी डोम हैं
शव की बाट जोहते
पथरा जाती हैं जिनकी आँखें,
शव नहीं आता—

इसके सिवा डोम कह भी क्या सकता है!

1984

धर्मयुद्ध

कैसे सम्भव है
दोनो ओर मृतको की संख्या समान हो

कैसे सम्भव है
एक की पताका गिरे
तो दूसरे की गिरे
एक पक्ष मे
जितनी विधवाएँ हो
दूसरी में
सधवाएँ
उनसे अधिक न हो

कैसे सम्भव है
एक राजधानी में जितना विलाप हो
दूसरी मे
उतना ही
संताप हो

दोनो ओर
पश्चात्ताप हो
दोनो ओर
धर्म हो

दोनों ओर
शर्म हो
दोनो पक्ष
रख दें हथियार
दोनों विजेता हों

मैं कहता हूँ
सम्भव नहीं है

एकतरफा होती है हत्या
एकतरफ़ा जय

एकतरफा दर्प
एकतरफ़ा भय

एकतरफ़ा विधवाएँ
एकतरफा सधवाएँ

एकतरफ़ा होता है विलाप
एकतरफ़ा सन्ताप

एकतरफा हर्ष
एकतरफा पश्चात्ताप

एकतरफ़ा होता है धर्म
एकतरफ़ा शर्म

दोनों ओर मृतकों की संख्या
समान नहीं होती

1984

गन्तव्य : चम्पा

हमे सिर्फ़ चम्पा तक जाना है

यह रास्ता सिर्फ चम्पा तक जाता है
जिन्हें और कही जाना है
और किन्ही रास्तो से जायँ
हम चम्पा जाने वालो को
यह कह कर न भटकायें—
क्या यह रास्ता चम्पा तक जाता है ?

जिन्हें चम्पा जाना है
उन्हें कुछ पूछने का अधिकार नही—
न यह कि चम्पा कहाँ है ?
न यह कि चम्पा कहाँ नही है ?
न यह कि क्या चम्पा है ?
न यह कि क्या यह सही है
कि चम्पा थी, चम्पा नही है ?

हमे सिर्फ चम्पा तक जाना है

1984

कन्नौज जानेवालों की गिनती

भाइयो और बहिनो, तुम कहाँ जा रहे हो ?
हम सभी
कन्नौज जा रहे हैं,
क्योंकि सभी
कन्नौज जा रहे हैं

जो कहीं नही जाते,
कन्नौज जा रहे है,
जो कहीं-कहीं जाते
हैं, कन्नौज जा रहे हैं,

जिन्हें प्रेम है कन्नौज से
कन्नौज जा रहे हैं,
जिन्हें द्वेष है कन्नौज से
कन्नौज जा रहे हैं

जो कन्नौज के विषय में
कुछ नहीं जानते
कन्नौज जा रहे हैं,
जो कन्नौज के विषय में
सब कुछ जानते हैं,
कन्नौज जा रहे हैं,

कौन है जो, कन्नौज नहीं जा रहा है ?

1984

नियम

मैं फिर कहता हूँ, महाराज—
मत कहें,
'बदला नही जा सकता नियम।
जो दूसरो पर लागू होता है
मुझ पर भी होगा।'

सभा को निरुत्तर करने के
और भी हैं उपाय—
सत्य जरूरी नही
सत्य का इस तरह अपव्यय
उचित नही—

निरुत्तर करना ही है सभा को
तो कहें
'तोड़ा नही जा सकता
नियम
बदला जा सकता है।'

कहिए···
'हम
नियम नहीं तोडते
सबकी तरह

नियम से डरते हैं
कभी-कभी बदन
जब कसने लगता,
नागरिको। तब हम
नियम में
संशोधन करते हैं—
नियमों में ढिलाई की जा सकती है।'

1984

पाटलिपुत्र

माथे पर रक्त का टीका है
राज्याभिषेक का
यही तरीक़ा है

किसका है यह रक्त ?
उसका तो नहीं जो मगध की
आँखों का
तारा है ?

किसी का हो
रक्त
क्या
फ़र्क़
पड़ता है ?
तारा भी तो
कभी-कभी
आँखों
में
गड़ता है

मौर्य अपशकुन नहीं
देखते
मौर्यों को

विजय से
वास्ता है

तक्षशिला और नालन्दा के बीच
मौर्य
है
और
रास्ता है

पताका
फहरा
रही
है

दोष
सिर्फ
मौर्यों
का
नहीं

पहले भी तो
पण्डितों ने
कहा है—

पाटलिपुत्र में
रात
गहरा
रही
है

1979

कविता की सालगिरह

जो लिखा, व्यर्थ था
जो नहीं लिखा,
अनर्थ था

1984

हस्तक्षेप

कोई छींकता तक नहीं
इस डर से
कि मगध की शान्ति
भंग न हो जाय,
मगध को बनाये रखना है, तो,
मगध में शान्ति
रहनी ही चाहिए

मगध है, तो शान्ति है

कोई चीखता तक नहीं
इस डर से
कि मगध की व्यवस्था में
दखल न पड़ जाय
मगध में व्यवस्था रहनी ही चाहिए

मगध में न रही
तो कहाँ रहेगी ?

क्या कहेंगे लोग ?

लोगों का क्या ?
लोग तो यह भी कहते हैं

मगध अब कहने को मगध है,
रहने को नही

कोई टोकता तक नही
इस डर से
कि मगध में
टोकने का रिवाज न बन जाय

एक बार शुरू होने पर
कही नही रुकता हस्तक्षेप—

वैसे तो मगधनिवासियो
कितना भी कतराओ
तुम बच नही सकते हस्तक्षेप से—

जब कोई नही करता
तब नगर के बीच से गुजरता हुआ
मुर्दा
यह प्रश्न कर हस्तक्षेप करता है—
मनुष्य क्यो मरता है ?

1984

सद्गति

मुझे जाना है काशी,
कहता हूँ
कोसल जा रहा हूँ

काशी मे क्या रखा है—
मणिकर्णिका है
मुर्दा आता है
मुर्दा जाता है

मुझे नही जाना है काशी

मुझे जाना है काशी

कहता हूँ
अभागा है वह जो
जाता है काशी
कोसल नहीं जाता

तुमने देखा है कोसल
तो चलो
मैं कोसल जा रहा हूँ

कोसल
और काशी मे
फर्क है—
कोसल काशी नही

मैं मरना चाहता हूँ
कोसल मे
कहता हूँ—

धन्य हैं वे, जिन्हें
काशी मे सद्गति
मिलती है

1984

शकटार

शकटार ! शकटार !
शकटार नहीं है ।
शायद तक्षशिला की ओर निकल गया है ।

शकटार ! शकटार !
शकटार नहीं है ।
शायद मगध लौट गया है ।

शकटार । शकटार ।
शकटार न मगध में है, न तक्षशिला में ।
शकटार तुम्हें कहीं नहीं मिलेगा ।

शकटार तभी आता
जब चन्द्रगुप्त आता है !

हत्या करता है शकटार
चन्द्रगुप्त गले से लगाता है
कभी-कभी हत्या करता है चन्द्रगुप्त
शकटार गरदन झुकाता है

शकटार न मगध मे है, न तक्षशिला मे ।

1984

तीसरा रास्ता

मगध मे शोर है कि मगध में शासक नही रहे
जो थे
वे मदिरा, प्रमाद और आलस्य के कारण
इस लायक
नही रहे
कि उन्हें हम
मगध का शासक कह सकें

लगभग यही शोर है
अवन्ती मे
यही कोसल में
यही
विदर्भ में
कि शासक नही
रहे

जो थे
उन्हें मदिरा, प्रमाद और आलस्य ने
इस
लायक नहीं
रखा
कि उन्हें हम अपना शासक कह सकें

तब हम क्या करें ?

शासक नही होंगे
तो कानून नही होगा

कानून नही होगा
तो व्यवस्था नही होगी

व्यवस्था नही होगी
तो धर्म नही होगा

धर्म नही होगा
तो समाज नही होगा

समाज नही होगा
तो व्यक्ति नहीं होगा

व्यक्ति नही होगा
तो हम नही होंगे

हम क्या करें ?

कानून को तोड़ दें ?

धर्म को छोड़ दें ?

व्यवस्था को भंग करें ?

मित्रो—
दो ही
रास्ते हैं :
दुर्नीति पर चलें
नीति पर बहस
बनाये रखें

दुराचरण करें
सदाचार की
चर्चा चलाये रखें

असत्य कहें,
असत्य करें
असत्य जिएं—
सत्य के लिए
मर मिटने की आन नही छोड़ें

अन्त में,
प्राण तो
सभी छोड़ते हैं
व्यर्थ के लिए
हम
प्राण नही छोड़ें

मित्रो,
तीसरा रास्ता भी
है—

मगर वह
मगध,
अवन्ती
कोसल
या
विदर्भ
होकर नही
जाता।

1984

मायामृग

जब मैं युवा था
कोई बूढ़ा दिख जाता
लाठी टेकता
सड़क पार करता
सीना पकड़ता

माँगता था मैं
अपने लिए दुआ
ईश्वर !
बुढ़ापे के पहले
मुझे उठा लेना

मैं बूढ़ा हो चुका
लाठी पकड़ता
सड़क पार करता
सीना पकड़ता

माँगता हूँ दुआ—

अभी नही !
पार तो करने दो
रास्ता

सुनो भैया राहगीर,
लो,
पकड़ लो
मेरा हाथ —
जरा रास्ता
पार करा देना

1984

प्रमाण

बालू पर छोड़कर अपने पगचिह्न
पूछते हैं दूसरे दिन, लोग—
कहाँ गया
यात्रा का प्रमाण ?

जानते हो,
क्या उत्तर मिलता है,
उन्हें ?

बन्धुओ, जाओ,
जहाँ
बालू नहीं है

बालू पर
टिकता नहीं
किसी का निशान।

1984

वापसी

मैंने उसे इसी रास्ते से
जाते देखा था :

अकेला नहीं था वह,
सेना थी,
हाथी थे,
घोड़े थे,
रथ थे,
वाद्य थे—
तामझाम था।

उन सबके बीच
एक घोड़े पर सवार
शान्त
वह
इस तरह गुजर रहा था,
जैसे बागडोर
उसके हाथ हो,
सब
केवल अनुगमन
कर रहे हों।

बीस साल बाद
मैं उसे इसी रास्ते से
आते देख
रहा हूँ :

अकेला नहीं है वह,
सेना है,
हाथी हैं,
घोड़े हैं,
रथ हैं,
बाँध हैं—
तामझाम है।

उन सबके बीच
एक घोड़े पर सवार
शान्त
वह
इस तरह गुजर रहा है
जैसे बागडोर
किसी और के
हाथ हो,
वह
केवल अनुगमन
कर रहा हो।

1984

मुठभेड़

नदी में हम किसकी छाया देख
चौंकते हैं,
चीखते हैं .
नहीं, यह सच नहीं।

मगर यह सच है

हम
सिर्फ स्वयं को ढाढस दे सकते हैं :
भ्रान्ति थी .
न यह नदी है,
न यह वह है,
जिसे देख
चौंकते हैं, हम।

नदी से हम
बच नहीं सकते

नदी सपनों में
आएगी,
याद दिलाएगी

चौंकोगे
तुम
चीखोगे .
यही है, वह,
जिससे बच निकलने पर,
मैं कहता था,
धन्यवाद !

1984

रोहिताश्व

जब भी मणिकर्णिका जाओगे
एक वृद्ध को
कोने में दुबका हुआ पाओगे ।

तुम्हे देख
उसकी आँखो में
कुछ
कौंधेगा—

वह
रोहिताश्व, रोहिताश्व
बिसूरता
तुमसे लिपट जायेगा ।

तब क्या करोगे ?

यही न :
"मैं रोहिताश्व नही हूँ
मैं सचमुच
रोहिताश्व
नही हूँ ।"

मगर तुम उस वृद्ध को
कैसे
विश्वास दिलाओगे
कि तुम
रोहिताश्व नहीं हो।

तुम पर उसकी पकड़
और भी कड़ी होगी,
वह कड़केगा :
"तुम्हीं हो रोहिताश्व !"

जिसका रोहिताश्व
मारा गया हो,
क्या तुम उसे
विश्वास दिला सकते हो
कि तुम
रोहिताश्व नहीं हो ?

1984

दीवार पर नाम

जब मैं किशोर था
जहाँ भी मिली
कोई कोरी दीवार
खड़िया से
लिख देता
मैं अपना नाम

दूसरे दिन पाता
मिटा दिया किसी ने
इस तरह
जैसे लिखा ही न था

तब मैं कड़कता
कौन ?
उत्तर मिलता—
सोमदत्त

मैं
बूढ़ा हो चुका हूँ
जब भी मिलती है
कोई कोरी दीवार
खड़िया से

लिख देता हूँ
अपना नाम
दूसरे दिन पाता हूँ
मिटा दिया किसी ने
इस तरह
जैसे लिखा ही न था

अब जब कड़कता हूँ
कौन ?
उत्तर मिलता है—
काल

1984